इकाई 4 नव-विप्लववादी उपागम

संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 अल्पविकास का सिद्धान्त

4.2.1 अल्पविकास सिद्धान्त की उत्पत्ति

4.3 केन्द्र-परिधि (केन्द्र-बाहरी सीमा) का सिद्धान्त

4.3.1 आन्द्रे गुंडर फ्रैंक के केन्द्र-परिधि (Centre-Periphery) पर विचार

4.3.2 केन्द्र-परिधि पर समीर अमीन

4.3.3 केन्द्र-परिधि पर इमैन्युअल वार्ल्सटीन

4.4 निर्भरता(*Theory of Dependencia)* का सिद्धान्त

4.4.1 निर्भरता के सिद्धान्त के मूल तर्क

4.5 सारांश

4.6 अभ्यास प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध के नव-विप्लववादी उपागमों को अलग-अलग नामों से जाना जाता है। यह हैं "अल्पविकास का विकास" (development of underdevelopment), "केन्द्र-परिधि" (centre-periphery), तथा "निर्भरता" (Dependency) सिद्धान्त। ये सभी सिद्धान्त, तृतीय विश्व के अफ्रीकी, एशियाई तथा लैटिन अमरीकी राज्यों में पूंजीवाद के प्रवेश (penetration) के विषय में महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। यद्यपि इन सभी उपागमों का मूल उद्देश्य तृतीय विश्व के अपेक्षाकृत निर्धन देशों में पूंजीवाद के प्रवेश का विवेचन करना है, फिर भी यह किसी एक समान विचारों को प्रकट नहीं करते हैं। व्यवहार में यही सभी उपागम, तृतीय विश्व में "विकास" अथवा "अल्पविकास" के कारणों का अपने-अपने तरीके से विवेचन करते हैं। फिर भी इन सभी उपागमों को "निर्भरता रूपरेखा" (dependency framework) के नाम से एक ही शीर्षक के अधीन रखा जाता है।

इनकी नव-विप्लववादी प्रकृति का कारण शायद यह है कि यह सभी उपागम प्रचलित आधुनिकीकरण के उपागम तथा पारम्परिक मार्क्सवादी परिवेश दोनों के मध्य, विकास या अल्पविकास के कारणों की समीक्षा करते समय, समान अंतर (equidistance) रखते हैं। अतः, यह उपागम न तो स्पष्ट रूप से आधुनिकीकरण के ढाँचे में आते हैं, न ही मार्क्सवादी सिद्धान्त की सीमा में। चाहे, वैचारिक सजातीयता की दृष्टि से ये, प्रचलित आधुनिकीकरण परियोजना की अपेक्षा, मार्क्सवाद के अधिक निकट हैं।

4.2 अल्पविकास का सिद्धान्त

तृतीय विश्व के देशों में निर्धनता, भूख, स्वास्थ्य इत्यादि समस्याओं के समाधान में असफल विकास के पारम्परिक सिद्धान्तों से असंतुष्ट, विद्वानों ने नए समीक्षात्मक और वर्णनात्मक ढाँचे की तलाश आरम्भ की। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् तृतीय विश्व के देशों के पर्यवेक्षकों को यह विश्वास हो गया था कि विकसित देशों से क विकसित देशों को पूंजी का हस्तांतरण वास्तविकता नहीं था। इसके विरुद्ध बुद्धिजीवियों में जो प्रतिक्रिया हुइ उसने नई अल्पविकासी सोच को जन्म दिया। इस सोच के परिणामस्वरूप अंततः अल्पविकास (underdevelopment) के सिद्धान्त का जन्म हुआ। पश्चिम-केन्द्रित विकास के सिद्धान्त के विरुद्ध इस नए सिद्धान्त की उत्पत्ति

हुई। पश्चिम-केन्द्रित सिद्धान्त यह मानता है कि, अल्पविकास विकास की प्रक्रिया की आवश्यक सार्वभौमिक विशेषता थी - कम से कम विकास के आरंभिक चरण में। अतः यह अपने ढंग से वर्णन करता है कि विकास किस प्रकार होता है। इसके विपरीत अल्पविकास का (विप्लववादी) सिद्धान्त, इतिहास की सहायता से अल्पविकास के बने रहने को सिद्धान्त का रूप देता है। अतः अल्पविकास का वर्णन अल्पविकास के सिद्धान्त के निर्माताओं की मुख्य चिंता बनी।

4.2.1 अल्पविकास सिद्धान्त की उत्पत्ति

सामान्य तौर पर यह विश्वास किया जाता है कि अल्पविकास के सिद्धान्त की उत्पत्ति के दो स्रोत रहे। एक, मार्क्सवाद के अंदर सैद्धान्तिक विवाद; तथा दो, लैटिन अमेरिका के विकास का साकार अनुभव। पूंजीवाद विकास के सम्बंध में, ग़ैर यूरोपीय देशों में पूंजीवाद विकास की संभावना, उसी प्रकार जैसे कि पाश्चात्य देशों में विकास हुआ, पारम्परिक मार्क्सवाद में विकास का मुख्य मुद्दा बना रहा। मार्क्स से लेकर रूसी नरोद्निक्स और लेनिन तक, पूंजीवाद की बढ़ती भूमिका की संभावना का विषय 1950 के दशक के अंत तक विवाद का मुख्य मुद्दा रहा। तब पारम्परिक मार्क्सवादियों के विचारों को प्रभावशाली रचनाओं के द्वारा चुनौती दी गई। मार्क्सवाद की धारणा थी कि अल्पविकसित देशों में पूंजीवादी विकास संभव था, तथा यह भी कि ऐसे समाजों में पूंजीवाद की बढ़ती भूमिका हो सकती थी। इस विचार को नए उभरते विचारों ने पूरी तरह अस्वीकार कर दिया। इस संदर्भ में प्रथम प्रमुख रचना थी पॉल बारन की *Political Economy of Growth* । बारन की, अल्पविकसित देशों में पूंजीवादी विकास की संभावना से निराशा उसकी अपनी रचना से आंकी जा सकती है:

अल्पविकसित देशों में आर्थिक विकास, विकासशील देशों के मूल हितों के पूरी तरह विपरीत था। औद्योगिक देशों को कच्चे माल की आपूर्ति, अपने निगमों को विशाल मुनाफ़े और निवेश के ठिकानों की प्राप्ति, अधिक विकसित पूंजीवादी पश्चिम के लिए पिछड़ा हुआ संसार सदा ही अनिवार्य मुख्य भूमिक्षेत्र का प्रतीक रहा है। अतः संयुक्त राज्य अमेरिका (तथा अन्यत्र) शासक वर्ग, तथाकथित "स्रोत देशों" के औद्योगीकरण का, तथा औपनिवेशिक एवं अर्द्ध-औपनिवेशिक विश्व में एकीकृत प्रगतिशील अर्थव्यवस्थाओं के उदय का कठोर विरोधी रहा है।

अल्पविकास के सिद्धान्त के दूसरा स्रोत का सम्बंध लैटिन अमरीकी देशों के विकास का वास्तविक अनुभव, तथा इन अनुभवों के आधार पर लैटिन अमरीकी विद्वानों द्वारा लिखित रचनाएँ हैं। इन विद्वानों में प्रमुख है रॉल प्रेबिच (Raul Prebisch), फर्नेन्डो कार्डोसो (Fernando Henrigue Cardoso), ओस्वाल्डो सन्केल (Osvaldo Sunkel) तथा थ्योटोनियो सैन्टोस (Thetonio Dos Santos) जिन्होंने इस विचार का खंडन किया कि पूंजीवाद विकास को बढ़ावा देता है। उन्होंने स्वयं अपने अल्पविकास के नए सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। अल्पविकास का यह सिद्धान्त आम तौर पर निर्भरता के सिद्धान्त (dependency theory) के नाम से जाना जाता है। इन विद्वानों ने विश्व पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को शोषण करने की संरचना पर बल दिया। इस व्यवस्था में, लैटिन अमरीकी अर्थव्यवस्थाओं पर पश्चिमी अर्थव्यवस्थाओं की प्रबल स्थिति थी। लैटिन अमरीकी अर्थव्यवस्थाएँ केवल पीछे चलने वाली व्यवस्थाएँ बन कर रह गई थीं। यह ध्यान देने योग्य है कि संयुक्त राष्ट्र के लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (Economic Commission on Latin America – ECLA) ने, प्रेबिच की अध्यक्षता में, महत्वपूर्ण कार्य किया। आरंभ में इसका लक्ष्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की शर्तों को समझना था। काफ़ी समय बाद इन्होनें केन्द्र-परिधि (centre-periphery) नामक व्यापक सिद्धान्त को प्रस्तुत किया। इस सिद्धान्त ने तृतीय विश्व के देशों के अल्पविकास पर नया प्रकाश डाला।

4.3 केन्द्र-परिधि (केन्द्र-बाहरी सीमा) का सिद्धान्त

ऍडम स्मिथ, रिकार्डो इत्यादि (हेक्शेन, आह्लिन तथा डेम्युअसन) द्वारा विकसित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के प्राचीन सिद्धान्त को अस्वीकार हुए, लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (ECLA) के विद्वानों ने तर्क प्रस्तुत किया कि विश्व व्यवस्था **केन्द्र** और **परिधि** में विभाजित हो गई है। उनका मुख्य तर्क है कि पारम्परिक अन्तर्राष्ट्रीय श्रम के

विभाजन का परिणाम यह हुआ कि उत्पादन और सम्पत्ति का बहुत अधिक मात्रा में **केन्द्र** के पास जमाव हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि **परिधि** (के देशों) में निर्धनता और भी बढ़ गई। इस तर्क को सिद्ध करने के लिए कहा गया **केन्द्र** के पास जो उत्पादन की संरचना है उसकी विशेषता है कि वह समरूप (सजातीय) तथा विविधतापूर्ण है, जबकि **परिधि** की संरचना विभिन्नांगी (विषम) तथा विशेषज्ञ है। परिधि इसलिए विशेषज्ञ कही जाती है, क्योंकि उसका उत्पादन कुछ प्राथमिक वस्तुओं तक सीमित है, जो कुछ विशेष प्रदेशों में हैं। इनका शेष अर्थव्यवस्था के साथ सम्बन्ध लगभग नहीं के बराबर है। इसमें दोहरापान (dualism) है, इसलिए यह विभिन्नांगी है - कुछ संरचनाएँ पूंजीवादी व्यवस्था पर आधारित हैं, जबकि कुछ अन्य पूंजीवाद वर्ग की व्यवस्था से जुड़ी । इन विशेषताओं के कारण लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (ECLA) के विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि परिधि की अर्थव्यवस्था को अन्तर्राष्ट्रीय श्रम-विभाजन तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से कोई विशेष लाभ नहीं होता। साथ ही लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (ECLA) के विद्वानों ने लैटिन अमेरिका से पर्याप्त उदाहरण देकर यह सिद्ध किया कि उन अर्थव्यवस्थाओं को उत्पादन की निचली दर, तथा व्यापार की विपरीत शर्तों के कारण असमान विकास पनपता रहा है। लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (ECLA) के विद्वानों का गुण यह है कि उन्होनें विकास और अल्पविकास को एक ही सिक्के के दो पक्षों के रूप में देखा। इन विद्वानों ने शोषण की इस स्थिति से उभरने के लिए जो सुझाव दिए वे थे "तुरंत औद्योगीकरण करना" "योजनाबद्ध औद्योगीकरण" तथा "प्रगतिशील अभिजनवर्ग" की आवश्यकता, ताकि लैटिन अमरीकी अर्थव्यवस्थाओं को उन पुरानी रुकावटों से मुक्त किया जा सके जो कि सदियों पुराने साम्राज्यवाद तथा/या नव-उपनिवेशवादी नियंत्रण का परिणाम हैं।

लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (ECLA) के विद्वानों द्वारा विकास और अल्पविकास की गति की व्याख्या करने के प्रयास के बावजूद, इसकी यह कह कर आलोचना की गई है कि यह सुधारवादी विचार हैं। इसको सुधारवादी कहकर आलोचना करने वालों का ऐसा करने का कारण है कि इन विद्वानों ने यह धारणा स्वीकार की कि परिधि में पूंजीवादी बुद्धिजीवी वर्ग तथा औद्योगिक पूंजीपतियों ने अपने राष्ट्रीय हितों का समर्थन तथा विदेशी हितों को सीमित करके, प्रगतिशील भूमिका निभाई। इसके अतिरिक्त लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (ECLA) की इस आधार पर भी आलोचना की गई कि वे शोषण के तरीकों का वास्तविक चित्रण करने में असमर्थ रहे।

4.3.1 आन्द्रे गुंडर फ्रैंक के केन्द्र-परिधि (Centre-Periphery) पर विचार

बारन तथा लैटिन अमरीकी आर्थिक आयोग (ECLA) के विचारों का आश्रय लेकर फ्रैंक ने निर्भरता सिद्धान्त का पूर्ण विकास किया, तथा पारम्परिक मार्क्सवाद की प्रगतिशील विचारधारा को वामपंथी चुनौती दी। अपनी मुख्य रचना, *Capitalism and Underdevelopment in Latin America* (1967) तथा अन्य रचनाओं के माध्यम से फ्रैंक ने अपने इस विचार को व्यक्त किया कि, "अल्पविकास, जैसा हम आप समझते हैं, तथा आर्थिक विकास भी, विश्व स्तर पर और चार शताब्दियों से अधिक के इतिहास के आधार पर, उस विकास का परिणाम हैं .... जो कि एक एकीकृत अर्थव्यवस्था हैः पूंजीवाद।" उसका कहना था कि केन्द्र और परिधि दोनों में पूंजीवाद, प्रगतिशील रूप से, एक दूसरे से सम्बद्ध है, तथा इसकी गति दोनों छोर पर विकास की उत्पत्ति करती है। परन्तु, फ्रैंक के अनुसार, समस्या यह है कि, केन्द्र के विपरीत, जो अकेले ही विकास के सभी लाभ हड़प लेता है, परिधि के छोर पर जो होता है वह है अल्पविकास का विकास। दूसरे शब्दों में, परिधि का अल्पविकास ही केन्द्र में विकास की प्रमुख शर्त है। ऐसा, फ्रैंक के अनुसार इसलिए होता है क्योंकि पूंजीवाद परिधि (periphery) के देशों में निरंतर अल्पविकास को उत्पन्न करता रहता है। वह ऐसा जिस तरीके से करता है वह है अतिरिक्त लाभ को केन्द्र के विकसित देशों ने अपने पास जमा करते रहने की प्रक्रिया। इस प्रकार फ्रैंक ने यह परिकल्पना की कि केन्द्र की विशाल शक्तियों से लेकर परिधि के अल्पविकसित देशों तक ऐसी कड़ी बन जाती है जो कि व्यापारिक केन्द्र के पिछलग्गू ग्रामीण व्यापारियों तथा किसानों तक को अपने जाल में शामिल कर लेती हैं। फ्रैंक ने, पॉल बारन से प्रेरित होकर, कहा था कि परिधि के देशों तथा विकसित पूंजीवादी देशों के मध्य किस प्रकार परस्पर-विरोधी सम्बन्धों का विकास होता है। अतः, उसके अनुसार, परिधि के 'पिछलग्गू' देशों के अल्पविकास को केवल पूंजीवाद के विकास की एकमात्र ऐतिहासिक प्रक्रिया के संदर्भ में समझा जा सकता है। उसके अनुसार, परिधि के किसी देश में विकास की उच्च दर तभी प्राप्त होती है जबकि केन्द्र के शक्तिशाली देशों के साथ उसके सम्बंध अत्यंत कमजोर हों। किसी देश विशेष में 'अल्पविकास के विकास' की व्याख्या करने के लिए विश्व की पूंजीवादी

व्यवस्था की पदसोपानीयता (hierarchy) में उस देश की स्थिति को तलाश की जा सकती है। दूसरे, यह कार्य सम्बद्ध समाज की आर्थिक संरचना की जाँच करके किया जा सकता है। विश्व की पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की पदसोपानीय प्रकृति को ध्यान में रखते हुए फ्रैंक ने तर्क दिया कि पूंजीवाद से सम्बंध विच्छेद करने के अतिरिक्त, अल्पविकास को समाप्त करने का और कोई मार्ग है ही नहीं।

फ्रैंक के 'अल्पविकास के विकास' (development of underdevelopment) के सिद्धान्त की प्रायः दो आधारों पर आलोचना की गई है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से लैक्लॉ (Lacklau) ने दो मौलिक प्रश्न उठाए। प्रथम यह कि क्या लैटिन अमेरिका में आरंभ में ही बाज़ार-आधारित पूंजीवादी व्यवस्था विद्यमान थी? समस्या यह है कि पूंजी तथा उत्पादन का पूंजीवादी उपक्रम एक ही चीज़ का प्रतिनिधित्व नहीं करते। वास्तव में, हो सकता है कि पूंजी सदा से विद्यमान हो, परन्तु उत्पादन के पूंजीवादी उपाक्रम की उत्पत्ति तभी हुई जबकि मुक्त श्रम बाजार की पहचान कर ली गई।

द्वितीय, सोलहवीं शताब्दी यूरोप में, पूंजीवाद की संरचनात्मक परिस्थितियाँ किस सीमा तक मौजूद थीं, तब जबकि लैटिन अमेरिका में पूंजीवाद का प्रमुख आरंभ हुआ? इसके अतिरिक्त, फ्रैंक यह भी मालूम करने का प्रयत्न करता है कि उत्पादन में नहीं, बल्कि परिभ्रमण (circulation) में, समाज में व्याप्त मूल विरोधाभास क्या थे? इसके फलस्वरूप फ्रैंक का सिद्धान्त इस बात का केवल आधा वर्णन कर पाता है कि विकास से अल्पविकास क्यों उत्पन्न होता है। यह भी तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि फ्रैंक ने शायद केन्द्र के देशों तथा परिधि के देशों के बीच लम्बवत् (vertical) सम्बंधों पर आवश्यकता से अधिक बल दिया। इस प्रकार उसने उन ऐतिहासिक सम्बंधों की अनदेखी की जिनके बल पर निर्भरता की संरचना टिकी हुई है।

4.3.2 केन्द्र-परिधि पर समीर अमीन

अल्पविकास के सिद्धान्त को अफ्रीकी विद्वान समीर अमीन ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। अपनी पुस्तक *Accumulation on a World Scale: A Critique of the Theory of Underdevelopment* (1974) में अमीन ने कहा कि औद्योगिक देश तथा कम विकसित देश इस प्रकार एक दूसरे से सम्बद्ध हैं कि पूंजीवाद को इस बात का अवसर नहीं मिलता कि वह अल्पविकसित देशों में उत्पादन की शक्तियों को विकास का अवसर दिलवाने की ऐतिहासिक भूमिका निभा सके। उसने इस बात पर बल दिया कि, साम्राज्यवादी युग के आरंभ से ही कम विकसित देश इस स्थिति में नहीं थे कि 'स्वायत्त रूप से टिकाऊ विकास' प्राप्त कर सकते, चाहे उनका प्रति व्यक्ति निर्गत (output) कितना ही रहा है। इसका एक पक्ष यह भी है कि परिधि के देश केन्द्र के साथ विकास के लिए मुक़ाबला करते हैं, जिसके कारण संरचना में कुरूपता (विकृति) आ जाती है, और वे अपने टिकाऊ विकास के लिए सक्षम नहीं रह पाते। इस प्रतिस्पर्द्धा से निर्यात की गतिविधियों में भी विकृति उत्पन्न हो जाती है। यही स्थिति छोटे उद्योगों तथा निचले स्तर की प्रौद्योगिकी की होती है। इन सबके परिणामस्वरूप परिधि से केन्द्र की ओर बहुमुखी हस्तांतरण होता है, तथा आर्थिक विकास अवरुद्ध हो जाता है।

4.3.3 केन्द्र-परिधि पर इमैन्युअल वार्ल्सटीन

इमैन्युअल वार्ल्सटीन का पूंजीवाद का अत्यंत उपयोगी अध्ययन विश्व-व्यवस्था सिद्धान्त का एक प्रमुख प्रतिमान है, और वार्ल्सटीन को इसका प्रवर्तक माना जाता है। वास्तव में, वार्ल्सटीन का विश्व-व्यवस्था सिद्धान्त, लेनिन के साम्राज्यवाद के अध्ययन तथा लैटिन अमेरिका के निर्भरता सिद्धान्त का विकसित रूप है। इसे अल्पविकास के सिद्धान्त में एक और महत्वपूर्ण प्रमुख योगदान माना जाता है। वार्ल्सटीन के अध्ययन की गहन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा अनेक मुद्दों के आधार पर अन्य अनेक विद्वानों, जैसे कि क्रिस्टोफ़र चेज़-डन, फ्रैंक तथा गिल्स इत्यादि ने उसके मूल सिद्धान्त का आगे विस्तार किया।

अपने प्रमुख ग्रंथ (*The Capitalist World Economy* (1979) में वार्ल्सटीन ने विश्व की प्रमुख संस्थाओं - वर्गों, जातियों, राष्ट्रीय समूहों, गृह-व्यवस्थाओं तथा राज्यों - के पूंजीवादी विश्व-व्यवस्था तक के विकास का चित्रण किया था। उसके अनुसार यह व्यवस्था विश्व-अर्थव्यवस्था का एक उदाहरण है। उसका कहना है कि इस व्यवस्था की उत्पत्ति यूरोप में लगभग सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में हुई। आगे चलकर इसका विस्तार होकर वर्तमान स्थिति आ पहुँची जिसमें संसार का कोई भी कोना इससे अछूता नहीं रहा। यह सब कुछ पूंजी के कभी न समाप्त

होने वाले एकत्रीकरण, अर्थात् पूंजीवाद, के कारण हुआ। अतः, आधुनिक विश्व-व्यवस्था, अन्य कुछ नहीं वरन् ‛पूंजीवादी व्यवस्था’ है। यही सम्पूर्ण व्यवस्था की धुरी है। उसका तर्क था कि विश्व व्यवस्था असमान है, तथा इसका सम्बंध पूंजीवादी प्रकृति से है। यह असमानता तीन प्रकार के राज्यों या क्षेत्रों में पदसोपानीय रूप में अभिव्यक्त होती है। वे हैं: - **परिधि, अर्द्ध-परिधि तथा मूल या केन्द्र।** विश्व की अर्थ-व्यवस्था के यह तीन क्षेत्र एक शोषण आधारित व्यवस्था से सम्बद्ध हैं जिसमें सम्पत्ति को परिधि से केन्द्र अपनी ओर आकर्षित करता रहता है। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों की असमानता और भी बढ़ती जाती है, अर्थात् सम्पन्न और अधिक सम्पन्न होते जाते हैं, तथा निर्धन और भी निर्धन हो जाते हैं।

4.4 निर्भरता का सिद्धान्त (THEORY OF *DEPENDENCIA*)

एक व्यवस्था के रूप में 'निर्भरता' का अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध में व्यापक प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग 'वर्चस्वशील - निर्भर' संरचना के परिवेश में किया जाता है जो कि राष्ट्र-राज्यों के पारस्परिक सम्बंधों को नियमित करती है। एक विचारधारा के रूप में, निर्भरता सिद्धान्त आर्थिक विकास और अल्पविकसित के कारणों की व्याख्या करने के लिए प्रयोग किया जाता है। निर्भरता सिद्धान्त की उत्पत्ति 1960 के दशक में लैटिन अमेरिका में हुई, तथा बाद में एशिया और अफ्रीका की कुछ रचनाओं में भी इसका विस्तार हुआ। निर्भरता सिद्धान्त लैटिन अमेरिका में विशेष रूप से प्रचलित हुआ जहाँ इसने सरकार की नीतियों पर काफी प्रभाव ड़ाला।

व्यवस्था के विकास के सिद्धान्त, जिसे लैटिन अमेरिका में निर्भरता के नाम से जाना गया उसमें प्रमुख योगदान करने वाले विद्वान थे प्रेबिच, फरतादो, संकेल, पाज़, कोर्दोसो, फलेतो, दॉस सांतोस तथा मैरिनी। यही कारण है कि अल्पविकास के सिद्धान्त को लैटिन अमेरिका के साथ सम्बद्ध किया जाता है। इसे सामाजिक विज्ञानों को लैटिन अमेरिका का योगदान माना जाता है।

लैटिन अमेरिका के अतिरिक्त, निर्भरता सिद्धान्त का न्यूनाधिक प्रभाव एशिया, अफ्रीका एवं कैरीबियन जैसे क्षेत्रों पर भी पड़ा। चाहे भारत जैसे देशों में निर्भरता का उपागम अधिक प्रभावी नहीं रहा, फिर भी इसकी उपस्थिति भारत में अवश्य पाई जाती है। भारत के कुछ मार्क्सवादियों, जैसे एम. एन. रॉय ने निर्भरता सिद्धान्त के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। फिर भी, लैटिन अमेरिका की तुलना में निर्भरता सिद्धान्त का भारत की नीतियों पर प्रभाव नहीं के बराबर रहा। अफ्रीका में अवश्य इसका प्रभाव देखा गया। अफ्रीका के समाज विज्ञान के व्यापक संगठन "आर्थिक एवं सामाजिक अनुसंधान के विकास की परिषद्" (Council for the Development of Economic and Social Research – CODESRIA) की प्रमुख भूमिका रही। कुछ समय बाद, यह संगठन, आर्थिक एवं सामाजिक अनुसंधान के विकास की परिषद्, अंगोला, मोज़ाम्बीक, दक्षिण अफ्रीका, ज़िम्बाबवे तथा नामीबिया के नेताओं तथा विप्लववादी राष्ट्रीय तथा स्वतंत्रता आन्दोलनों का मुख्य केन्द्र बन गया। वैसे अपने-अपने साम्राज्यवादी शोषण के अनुभव के आधार पर इन देशों ने अपने पृथक अल्पविकास के सिद्धान्तों का विकास भी किया। निर्भरता के परिवेश की विश्व के इस भाग में लोकप्रियता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि तन्ज़ानिया के राष्ट्रपति जूलियस नायरेरे ने स्वयं इसको इतना लोकप्रिय बनाया कि यह स्वतंत्र मोज़ाम्बीक और अंगोला की सरकारी विचारधारा का अंश बन गया।

4.4.1 निर्भरता के सिद्धान्त के मूल तर्क

'निर्भरता सिद्धान्त' के नाम से जाने वाला विचारों का कोई एकीकृत तन्त्र नहीं है। और न विभिन्न विचारकों में निर्भरता सिद्धान्त के विषय में कोई आम सहमति है। निर्भरता के साहित्य का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इसके विभिन्न समर्थक और आलोचक दोनों ही अलग-अलग दिशा ग्रहण करते हैं। कुछ आलोचक हैं जो कि निर्भरता के समर्थकों का अपने राष्ट्र की ओर झुकाव तथा बाहर के प्रभाव का विरोध, इसकी आलोचना करते हैं। दूसरी ओर, कुछ विद्वान यह कह कर आलोचना करते हैं कि निर्भरता सिद्धान्त आंतरिक वर्ग संघर्ष की उपेक्षा करके बाहरी कारकों पर अधिक ध्यान देता है। कुछ और भी आलोचक हैं जो यह विश्वास करते हैं कि निर्भरता सिद्धान्त साम्राज्यवाद के विश्लेषण को धुंधला बना देता है। ऐसा शायद इसलिए हुआ है क्योंकि निर्भरता

पर साहित्य की भरमार है जिसमें अनेक धारणाएँ और उपाय समाहीत हैं। फिर भी, निर्भरता के लेखकों की एक विशेषता यह है कि वे यह मानते हैं कि वे अल्पविकसित देशों के सामाजिक आर्थिक विकास को बाहरी शक्तियों से प्रभावित हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि अन्तर्राष्ट्रीय पूंजीवादी व्यवस्था में अधिक विकसित पूंजीवादी देश अल्पविकसित देशों पर प्रभुत्व बनाए रखते हैं।

1960 और 1970 के दशकों में निर्भरता उपागम के प्रवर्तकों ने अपनी बातों पर बल देने के प्रयास किए। उन्होंने कहा कि तृतीय विश्व में विकास के प्रश्न को ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष समस्या के रूप में देखा जाना चाहिए। निर्भरतावादियों के अनुसार विश्व अर्थ-व्यवस्था दो प्रकार के दशों में विभाजित थी। वे थेः पश्चिमी यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के विकसित पूंजीवादी देश जो कि **केन्द्र** थे, तथा **परिधि** में शामिल एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के तृतीय विश्व के देश। निर्भरतावादियों का दावा था कि अल्पविकसित तृतीय विश्व के देश पूंजीवादी व्यवस्था के जगत में शामिल होते जा रहे थे, तथा उनकी अर्थव्यवस्थाएँ, केन्द्र के देशों से परिधि के देशों में पूंजी के निरंतर प्रवाह के कारण, तेजी से उत्पादन की पूंजीवादी प्रक्रिया को अपनाती जा रही थी। यह सब कुछ पिछली तीन-चार शताब्दियों में हुआ था, जिसके कारण परिधि की अर्थ-व्यवस्थाएँ मूल (केन्द्रीय) अर्थव्यवस्थाओं के साथ जुड़ गई थीं। उनके तर्क के अनुसार, यह स्थिति इसलिए उत्पन्न हुई क्योंकि पूंजीवादी और पूर्व-पूंजीवादी दोनों संरचनाओं का सहअस्तित्व रहा क्योंकि पूंजीवादी विकास की पूरी क्षमता को समझा नहीं गया। इस प्रकार, निर्भरतावादियों ने कहा कि विकास की भांति, अल्पविकास भी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है, जिसने मूल (केन्द्रीय) अर्थव्यवस्थाओं को परिधि की अर्थव्यवस्थाओं पर अपना वर्चस्व स्थापित करने दिया। ऐसा हाने से परिधि में विकास नहीं हो पाया। इसके परिणामस्वरूप, पूंजी निवेश, ऋण, बाज़ार, प्रौद्योगिकी तथा उत्पादित वस्तुओं के लिए परिधि को केन्द्र पर निर्भर हो जाना पड़ा; तथा विश्व की पूंजीवादी व्यवस्था में मूल (केन्द्र) के देशों की भूमिका अधिकाधिक बढ़ती गई। परिधि के देशों की बढ़ती भेद्यता (vulnerability) के कारण मूल (केन्द्र) देशों के द्वारा उनका अधिकाधिक शोषण किया गया। परिधि के देशों की अर्थव्यवस्थाओं की अधीनस्थ स्थिति ने उनकी सौदेबाजी की क्षमता कर दी, विशेषकर व्यापार के क्षेत्र में। इसने केन्द्र के देशों को खुली छूट दे दी कि वे कच्चे माल और प्राथमिक वस्तुओं के मूल्य निर्धारित कर सकें। परिणाम यह हुआ कि मूल्यों में निरंतर उतार-चढ़ाव होता रहा और व्यापार की शर्तों की क्षति हुई। इन सबका परिणाम यह हुआ कि मूल (केन्द्र) देश, संसार के अपने भाग में, परिधि के देशों के हितों की कीमत पर, पूंजी का भंडारन करते गए। केन्द्र और परिधि के देशों के यह शोषण-आधारित सम्बन्ध न केवल संरचनात्मक रूप से जुड़ गए परन्तु सम्पत्ति की विषमता भी बढ़ती गई। इन सब कारणों से परिधि की अर्थव्यवस्थाएँ, विश्व पूंजीवादी व्यवस्था में, निर्धन होती गईं।

ब्राजील के जाने माने समाज वैज्ञानिक दॉस सांतौस ने लिखा थाः

> निर्भरता से हमारा अभिप्राय ऐसी स्थिति से है जिसमें कुछ देशों की अर्थव्यवस्था, किसी अन्य अर्थव्यवस्था के विकास और विस्तार से प्रभावित होती है जिसने अन्य (अल्पविकसित) देशों को अपने अधीन कर लिया है। दो या अधिक अर्थव्यवस्थाओं की एक दूसरे पर निर्भरता, तथा इनके और विश्व व्यापार के मध्य निर्भरता से, निर्भरता का ऐसा रूप विकसित होता है .... जिसका तात्कालिक विकास पर सकारात्मक अथवा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

चिली के अर्थशास्त्री संकेल ने तृतीय विश्व के देशों की राजनीतिक अर्थव्यवस्थाओं में, विश्व पूंजी के प्रवेश के विषय मे लिखा कि, बाहरी आर्थिक और राजनीतिक तत्त्व स्थानीय विकास को प्रभावित करते हैं, तथा पिछड़े वर्गों की कीमत पर शासक वर्गों को शक्ति प्रदान करते हैं। उसके अनुसारः

विदेशी तत्वों को विदेशी न मानकर व्यवस्था का अभिन्न अंग माना जाता है, जिसके अल्पविकसित देश के भीतर अनेक अदृश्य राजनीतिक, वित्तीय, आर्थिक, तकनीकी तथा सांस्कृतिक प्रभाव पाए जाते हैं ..... अतः निर्भरता की अवधारणा ने पूंजीवाद के अन्तर्राष्ट्रीय युद्धोत्तर विकास को विकास की स्थानीय प्रक्रिया की भेदभाव पूर्ण प्रकृति के साथ जोड़ा। विकास के साधनों और उसकी उपलब्धियों तक पहुँच भेदभाव रहित नहीं होती, विकास सब तक पहुँचने के बजाय, विशेष हित समूहों के विशेष हित में अभिवृद्धि होती है, तथा परिधि वर्ग पिछड़ा हुआ ही रहता है।

इस इकाई की अब तक की समीक्षा से यह स्पष्ट है कि अतिरिक्त पूंजी को विकसित पूंजीवादी देश संचित करते जाते हैं, जहाँ पर विकास की गति और भी तेज हो जाती है। निर्भरतावादी यह तर्क देते हैं कि विकसित देशों के द्वारा अतिरिक्त पूंजी का अधिग्रहण, असमानता उत्पन्न भी करता है, और उसे बनाए रखने में भी योगदान करता है। शोषण की गति की व्याख्या करते हुए, वे औपनिवेशिक युग में जाते हैं, तथा साम्राज्यवादी देशों द्वारा उपनिवेशों की लूट के मूल कारणों की समीक्षा करते हैं। उनका तर्क है कि जो औपनिवेशिक युग में होता था वही आज भी तृतीय विश्व के अल्पविकास के रूप में विद्यमान है। अंतर केवल यह है कि जहाँ औपनिवेशिक युग में प्रत्यक्ष रूप से उत्पादों और अतिरिक्त पूंजी की लूट हुआ करती थी, आज के युग में उसी प्रक्रिया को 'लाभांश का प्रत्यावर्तन' नाम दिया जाता है। निर्भरता सिद्धान्त की एक अत्यंत प्रमुख विशेषता यह है कि, मार्क्सवाद के सिद्धान्त के विपरीत, यह आज वर्गों के मध्य नहीं बल्कि राज्यों के मध्य विनिमय (लूट के नए रूप में) पर विकसित एवं अल्पविकसित देशों के सम्बंध पर आधारित हैं।

4.5 सारांश

1960 और 1970 के दशकों में निर्भरता सिद्धान्त तृतीय विश्व में प्रचलित हो गया था। उसके विपरीत अब यह घोषण करना सामान्य बात हो गई है कि यह सिद्धान्त अब मृतप्राय हो गया है। पश्चिम के प्रमुख परम्परागत विद्वानों तथा वामपंथी बुद्धिंजीवियों दोनों ने ही अल्पविकास सिद्धान्त के इस विचार को अस्वीकार कर दिया है कि केवल पश्चिम के देश ही तृतीय विश्व के अल्पविकास के लिए उत्तरदायी हैं। इसका औचित्य इस आधार पर सिद्ध करने का प्रयास किया जाता है कि तृतीय विश्व के अनेक देशों ने सराहनीय आर्थिक प्रगति की है, जिसकी किसी को अपेक्षा नहीं थी। इनमें प्रमुख तृतीय विश्व देश हैः दक्षिण कोरिया, थाईलैण्ड, सिंगापुर तथा ताईवान, जिन्हें एशिया का सिंह कहा जाता है। कुछ अन्य नवीन विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ भी तेजी से प्रगति कर रही हैं। कुछ अन्य कारण भी हैं जिनसे अल्पविकास के सिद्धान्त की लोकप्रियता में भारी कमी को स्पष्ट किया जा सकता है। इनमें से कुछ मूल ऐतिहासिक तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक घटनाएँ हैं, सोवियत गुट का विघटन, पूर्व सोवियत संघ का [illegible]करण, शीत युद्ध की समाप्ति तथा बाजार पर 'केन्द्र' का वर्चस्व। भूमंडलीकरण की नई पृष्ठभूमि में अल्पविकास सिद्धान्त के प्रभाव में कमी हुई है, चाहे उसको पूरी तरह रद्द न भी किया गया हो। इसके अतिरिक्त 1990 के दशक में तृतीय विश्व के कुछ देशों, विशेषकर लैटिन अमेरिका तथा अफ्रीका के देशों के आर्थिक संकट ने उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा प्रेरित नए संरचनात्मक फेरबदल के कार्यक्रम की शरण लेने के लिए विवश किया।

इस सब के बावजूद, यह स्वीकार करना होगा कि निर्भरता के उपागम ने अल्पविकास की एक वैकल्पिक व्याख्या पेश की है। न केवल इसने आधुनिकीकरण सिद्धान्त तथा रूढ़िवादी मार्क्सवाद की पारम्परिक बुद्धिमत्ता को चुनौती दी, बल्कि स्वयं अपना नवीन मार्गदर्शन किया। इस सिद्धान्त के अब लगभग लोप हो जाने के बावजूद, इसने तृतीय विश्व के अल्पविकास को समझाने में सराहनीय कार्य किया। इसके 'निधन' के बाद भी, शैक्षणिक दृष्टि से इसका महत्व अब भी बना हुआ है।

4.6 अभ्यास प्रश्न

1) अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के अध्ययन का नव-विप्लववादी सिद्धान्त क्या है?
2) अल्पविकास किस प्रकार विकास से भिन्न है? अल्पविकास सिद्धान्त की प्रमुख विशेषताएँ उजागर कीजिए।
3) आप अल्पविकास के केन्द्र-परिधि प्रतिमान से क्या समझते हैं? इस विषय में विभिन्न विद्वानों के विचार क्या हैं?
4) लैटिन अमेरिका में 1970 के दशक में निर्भरता सिद्धान्त अत्यंत लोकप्रिय क्यों हुआ? ऐसे अन्य क्षेत्रों का उल्लेख कीजिए जहाँ नीति-निर्धारकों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। उसके कारणों की समीक्षा कीजिए।
5) निर्भरता उपागम के मुख्य तर्क बताइए।
6) हाल के वर्षों में, आप के विचार से, निर्भरता सिद्धान्त की क्रांतिकारी अपील में कमी क्यों आई?